संस्थापित १८६७ ई०

# आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

एक प्रति ₹ २.००
वार्षिक शुल्क ₹ १००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) आजीवन शुल्क ₹ १०००

वर्ष : १२३ ● अंक-२६ ● १६ जुलाई २०१६ आषाढ़ शुक्ल पक्ष पूर्णिमा संवत् २०७६ ● दयानन्दाब्द १६६ वेद व मानव सृष्टि सम्वत् : १६६०८५३१२०

## भारतीय संस्कृति सभ्यता की पहचान है गुरु शिष्य परम्परा

**–डॉ० धीरज सिंह,** सभा प्रधान

भारतीय सभ्यता और संस्कृति में गुरू की बड़ी महिमा रही है। वैसे तो दुनिया की अधिकांश सभ्यताएं अपने गुरुवों के प्रति सदैव नतमस्तक रही हैं, परन्तु भारत में गुरू परम्परा की जो विरासत रही है, गुरुओं के प्रति इस अगाध श्रद्धा के अनेकानेक कारण हैं। गुरूओं द्वारा स्थापित अनेक मर्यादाएँ और व्यवस्थाएं आधुनिक मनुष्य की यात्रा में मील का पत्थर साबित हुई हैं चूँकि भारतीय सामाजिक परिवेश आध्यात्मिक पगडंडियों से गुजरता हुआ अपने जीवन की यात्रा को पूर्ण करता है अतः यहाँ के जीवन मूल्यों में गुरू परम्परा और भी आत्याधिक सन्दर्भों को आत्मसात करती हैं।

शिक्षक शिक्षा देता है जबकि गुरू दीक्षित करता है। दो और दो चार होते हैं इसका ज्ञान शिक्षा के अंतर्गत आता है, परन्तु इसका समुचित उपयोग दीक्षा की परिधि में आता है। शिक्षित व्यक्ति साक्षर हो सकता है परन्तु दीक्षित व्यक्ति साक्षर होने के साथ–साथ सम्बंधित शिक्षा के समुचित उपयोग को जनहित में प्रचार प्रसार करता है भारत देश की अपनी अन्नय विशेषताएं हैं दीक्षा का विचार सर्वप्रथम भारतीय ऋषियों को सूझा। भारतीय ऋषियों ने अपने शिष्यों को शिक्षित करने के बजाय दीक्षित करने पर जोर दिया। दीक्षा संस्कारों और सम्यक चेतना का एक ऐसा वैचारिक सम्मिश्रण हैं, जहां व्यक्तित्व मानवीय मूल्यों का प्रहरी होकर जीवन कर्तव्यों के पथ पर अग्रसर होता है। आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में विश्वविद्यालयों में दीक्षांत समाराहे आयोजित करने के पीछे यही उद्देश्य था कि विद्यार्थी जब शिक्षालयों से पढ़कर बाहर जाएं, तो वे ज्ञान और मानवीयता का ऐसा सुन्दर नमूना हो, जिस पर आने वाली पीढ़ियां गर्व कर सकें। जो अपनी शिक्षा के आधार पर एक ऐसे समाज के निर्माण में सहयोगी हो, जो दुनिया का उतनी समुन्नत और खुशहाल बनाने में योगदान दें सकें, जितना की उनसे पूर्व उपलब्ध न थी। जो गुरूकुल में विषयक ज्ञान के अधिष्ठाता थे वे "आचार्य" कहलाये। जिन्होंने उपलब्ध ज्ञान से आगे के ज्ञान का मार्ग प्रशस्त किया। मन के मालिक और तकनीकी आवश्यकताओं को जीतने वाले 'मुनि' थे। शारीरिक जरूरतों और सांसारिक वस्तुओं के मोह से ऊपर उठकर एक लक्ष्य विंदु को आत्मसात करने वाले 'तपस्वी' बनें। यहां गुरूओं की इन श्रेणियों के पीछे एक बात समान थी। सभी के समग्र कल्याण की कामना और उसके समुचित उपाय।

आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती जब मथुरा में चक्षुहीन दंडीस्वामी गुरू विरजानन्द को अपना गुरु बनाने के लिए उनकी झोपड़ी के द्वार पर पहुंचे तो भीतर से गुरु की आवाज़ आई– कौन? तब दयानन्द का प्रतिउत्तार था – यही तो जानने आया हूँ? वस्तुतः

शेष पृष्ठ ४ पर

## गुरू शिष्य का सम्बन्ध प्रभु प्रदत्त है

**–स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती,** सभा मंत्री

१ जुलाई, गढ़मुक्तेश्वर हापुड़–गुरू शिष्य का सम्बन्ध प्रभुप्रदत्त है इसलिए पवित्र निःस्वार्थ होने से दीर्घकाल तक आत्मीय भाव सुरक्षित बना रहता है शिष्य सदैव गुरू के प्रति श्रद्धालु बनकर आशीर्वाद से अपना सौभाग्य बढ़ाता रहता है ये विचार बहादुरगढ़ स्थित लाल बहादुरशास्त्री इण्टर कालेज के नवीन सत्र उद्घाटन अवसर पर यज्ञ के ब्रह्मा पद पर सुशोभित वैदिक विद्वान् आर्य सन्यासी तपस्वी योगाचार्य स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती संचालक गुरूकुल पूठ प्रान्तीय मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र० ने व्यक्त किये वे मुख्य अतिथि के रूप में आये और यज्ञ के पश्चात् क्षेत्र से आई जनता एवं छात्रों के बीच प्राचीन परम्परा के गुरू शिष्यों का सम्बन्ध कितना पवित्र था बतलाया आपने कहा कि गुरू का हृदय, मन, वाणी, चित्त शिष्य के हृदय मन वाणी के लिए वरदान होती है और एकभाव से गुरू छात्र के ज्ञान को बढ़ाता है शिष्य गुरू के यश को बढ़ाता है आशीर्वाद से आयु विद्या यश और बल को बढ़ाता है उन्होंने क्षेत्रीय जनता से अपील की आज पुराने संस्कार और संस्कृति ही देश के गौरव को बचा सकती है यज्ञ शिवसंकल्प को पूर्ण कराकर मनुष्य को देवता बना देता है यजमान मा० राजपाल सिंह मा० कल्याण सिंह प्रधानाचार्य रवीन्द्र कुमार जी, प्रबन्धक जगमाल सिंह एवं रणजी सिंह निरंजन रहे, वेद पाठ गुरूकुल पूठ के ब्र० धर्मप्रकाश, विश्वबन्धु शास्त्री, प्रदीप शास्त्री ने किया म० आत्मदेव जी, म० मंगत सिंह एवं रणजीत सिंह ने अपने विचार रक्खे संयोजक अमरपाल सिंह मा० रघुपति सिंह, तेजपाल सिंह, ग्राम सभा प्रधान पति, महेश आर्य, वीर सिंह आर्य हकीम जी अशोक सिंह, मूलचन्द्र आर्य आदि–आदि सैकड़ों लोगों ने आहुतियाँ लगाकर आगामी शिक्षा सत्र के लिए खुशहाली हेतु प्रार्थना की छात्रों ने एवं छात्राओं ने भी आहुतियाँ लगाई बाद में स्वामी जी ने सभी यजमानों को आशीर्वाद दिया प्रधानाचार्य जी ने सभी का आभार व्यक्त करते हुए स्वामी जी के बताये मार्ग पर चलने का सभी से आह्वान किया।

**डॉ. धीरज सिंह**
प्रधान/संरक्षक

**स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती**
मंत्री/प्रधान सम्पादक

**सम्पादकीय.....**

# वर्ण व्यवस्था का स्वरूप

यदि परमात्मा सृष्टि के आदि ऋषियों को वेद विद्या न पढ़ाता और वे अन्यों को न पढ़ाते तो सब लोग अविद्वान ही रह जाते। जैसे किसी बालक को जन्म से ही एकांत प्रदेश में अविद्वानों अथवा पशुओं के संग रख दिया जाये तो वह जैसा संग होगा वैसा बन जायेगा। जंगली भील आदि जातियां इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।

जब तक आर्यावर्त्त देश से शिक्षा नहीं गई थी तब तक मिस्र, यूनान और यूरोपादि देशों के मनुष्यों में कुछ भी विद्या नहीं थी, और कोलम्बस आदि पुरूष अमेरिका में तब तक नहीं गये थे तब तक वे भी करोड़ों वर्षों से विद्याहीन थे। पुनः सुशिक्षा के होने से विद्यावान् हो गये हैं। ऐसे ही सृष्टि के आदि में परमात्मा से विद्या प्राप्त करके उत्तरोत्तर कल में विद्वान होते आये हैं। वह ईश्वर अग्नि आदि ऋषियों का गुरू अर्थात् अध्यापक है।

''मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरूषो वेद'' इस शतपथ ब्राह्मण वचन के आधार पर बतलाया है कि बालक के माता, पिता और आचार्य ये तीन शिक्षक हैं। इनकी उत्तम शिक्षा से मनुष्य ज्ञानवान् बनता है। पांच वर्ष की आयु तक माता पिता तथा आठ वर्ष की आयु तक पिता बालक को उत्तम शिक्षा प्रदान करें। और यह राजनियम तथा जातिनियम होना चाहिए कि पांचवें अथवा आठवें वर्ष से आगे अपने लड़के और लड़कियों को कोई घर में न रख सकें। पाठशाला में अवश्य भेज देवें। जो न भेजें व दण्डनीय हों। पाठशालाएं नगर के वातावरण दूर हो। वहां सब बालकों को तुल्य वस्त्र, खान-पान, आसन दिये जायें। चाहे वे राजकुमार या राजकुमारी हों, चाहे वे दरिद्र की सन्तान हों। सबको तपस्वी होना चाहिए। कन्याओं की पाठशाला में अध्यापिका और सेवक आदि सब स्त्री हों और ब्रह्मचारिणी रहें। और तब स्त्री व पुरूष के दर्शन आदि विषयों से अलग रहें और शिक्षक लोग उन्हें विषयों से बचायें। जिससे वे उत्तम विद्या, शिक्षा, शील, स्वभाव, शरीर और आत्मा के बल से युक्त सभ्य नागरिक बन सकें। छात्र तथा छात्रायें आचार्य कुल में रहकर वेदांग, दर्शन, उपनिषद, ब्राह्मणग्रन्थ, वेद, आयुर्वेद, धनुर्वेद, अर्थात् राजविद्या, गन्धर्व वे अर्थात्, गानविद्या, अथर्ववेद अर्थात शिल्पविद्या, ज्योतिष शास्त्र अर्थात् बीजगणित, अंकगणित भूगोल, खगोल और भूगर्भ विद्या को सीखें स्त्री, पुरूष, अर्थात् मनुष्य मात्र को पढ़ाने का अधिकार है।

शिक्षा के उपरान्त आचार्य अपने शिष्य तथा शिष्याओं को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और सूद्र इन चार वर्णों में दीक्षित करता है। जिस शिष्य में अध्ययन, अध्यापन, यज्ञ करना-कराना, शम, दम तथा तप आदि कर्म तथा गुणों की प्रवृत्ति देखता है उसे ब्राह्मण वर्ण में दीक्षित करता है। वह समाज में पाठक, शिक्षक, शिक्षाधिकारी, राजपुरोहित, पुराहितादि रूप में सेवा करता है। जिस शिष्य में प्रजापालन, दान, शौर्य, तेज आदि कर्म तथा गुणों की प्रवृत्ति देखता है उसे क्षत्रिय वर्ण में दीक्षित करता है। और व समाज में चक्रवर्ती सम्राट, राजा, सभापति, सेनापति और न्यायाधीश आदि रूप में सेवा करता है। जिस शिष्य में गौ आदि पशुओं का पालन, कृषि, व्यापार आदि कर्मों में प्रवृत्ति देखता है उसे वैश्य वर्ण में दीक्षित करता है और वह समाज में पशुपालन, दान, व्यापार, कृषि आदि कार्य करता है। व्याज आदि व्यवहार से धनार्जन करता है। मूल से दूना अर्थात एक रूपया दिया हो तो सौ वर्ष में भी दो रूपये से अधिक नहीं लेता। जिसे पढ़ने तथा पढ़ाने से भी विद्या नहीं आती वह शूद्र रह जाता है। उसके लिए ईश्वर ने एक ही कर्म का उपदेश किया है कि वह निन्दा, ईर्ष्या, अभिमान आदि दोषों को छोड़कर ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्यों की सेवा करे। महर्षि दयानन्द मानव जाति के ये ब्राह्माणादि चार भेद उनके गुण और कर्म के आधार पर स्वीकार करते हैं। इसके अतिरिक्त वे जन्म के आधार पर बने विविध जातिभेदों में कोई विश्वास नहीं रखते।

— सम्पादक

# वेदामृतम्

मातेव यद् भरसे पप्रथानो[११],जनं जनं धायसे चक्षसे च [११]।
वयो वयोजरसेयद्दधानः[११], परित्मना विषुरूपो जिगासिं [११]।।

ऋग् ५.१५.४

हे सकल जग में अपनी कीर्ति से प्रख्यात जगदीश्वर! शिशुओं के समान स्वयं को अरक्षित समझ प्रत्येक जन तुम्हारी शरण में आ रहा है। जैसे माँ अपने शिशुओं को दूध पिलाने के लिए और उनकी देखभाल करने के लिए अपनी गोद में उठाती है, वैसे ही तुम जन-जन को अपनी अभयदायिनी संताहारिणी गोद में लेकर अपना पयःपान कराते हो, और उनकी देखभाल तथा संरक्षण तुम पूर्णतः अपने हाथ में ले लेते हो। हम लोग पुष्टिकर सांसारिक खाद्य और पेय पदार्थों को भले ही खाते-पीते रहें, पर उनसे प्राप्त पुष्टि को प्राप्त नहीं कर लेता। और असल में देखा जाये तो आत्मिक पुष्टि ही क्यों, भौतिक पुष्टि को प्राप्त नहीं कर लेता। और असल में देखा जाये तो आत्मिक पुष्टि ही क्यों, भौतिक पुष्टि को भी देनेवाले तुम्हीं हो, क्योंकि समस्त भौतिक पोषण खाद्य और पेय भी तुम्हारे ही दिये हुए हैं। माँ के समान केवल तुम पयःपान ही नहीं कराते, अपितु हम शिशुओं की सम्पूर्ण सुरक्षा का उत्तरदायित्व भी ग्रहण करते हो।

हे परमात्मन्! इस भूमि-माता की गोद में जो अगणित जन निवास करते हैं, उनमें से प्रत्येक के जीवन को तुम सहारा देते हो। यदि तुम्हारा सहारा हमें न हो तो हम कहीं भी, किसी भी स्थिति में लड़खड़ाकर गिर पड़ें, जरा-सी भी बाधा आने पर विचलित हो जायें। हम गिरते-पड़ते, रोगाकान्त होते जनों को तुम अवलम्ब बनकर ऊपर उठाते हो, दीर्घजीवी बनाते हो। हे ब्रह्माण्ड के अधिपति! तुम एक होते हुए भी अनेकारूप हो, अपने विभिन्न गुण-कर्मों के आधार से माता, पिता, भाई, बन्धु, सखा, स्वामी, जगत्-स्रष्टा जगदाधार आदि विभिन्न रूपों में स्मरण किए जाते हो। तुम किसी एक विशेष स्थान परस्थित न होकर चारों ओर विद्यमान हो, सर्व-व्यापक होकर तुम सब वस्तुओं की चौकसी कर रहे हो। हे ज्योतिर्मय प्रभु! तुम हमें भी माँ बनकर अपने अंक में ले लो, हमें भी अपना पयःपान कराओ, हमें भी सहारा दो और प्रहरी बनकर हमारी भी सतत् रक्षा करते रहो।

—साभार वेदमञ्जरी

गतांक से आगे .....

## सत्यार्थ प्रकाश

# अथ नवमसमुल्लासारम्भः

## अथाऽऽचाराऽनाचारभक्ष्याऽभक्ष्यविषयान् व्याख्यास्यामः

अब जो धर्म युक्त कामों का आचरण, सुशीलता, सत्पुरुषों का संग और सद्विद्या के ग्रहण में रुचि आदि आचार और इनसे विपरीत अनाचार कहाता है, उसको लिखते हैं—

विद्वद्भिः सेवितः सद्भिर्नित्यमद्वेषरागिभिः।
हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस्तन्निबोधत।।१।।
कामात्मता न प्रशस्ता न चैवेहास्त्यकामता।
काम्यो हि वेदाधिगमः कर्मयोगश्च वैदिकः।।२।।
सकंल्पमूलः कामो वै यज्ञाः संकल्पसम्भवाः।
व्रतानि यमधर्माश्च सर्वे संकल्पजाः स्मृताः।।३।।
अकामस्य क्रिया काचिद् दृश्यते नेह कर्हिचित्।
यद्यद्धि कुरुते किञ्चित् तत्तत्कामस्य चेष्टितम्।।४।।
वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च।।५।।
सर्वन्तु समवेक्ष्येदं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः।
इह कीर्त्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्।।७।।८।।
योऽवमन्येत ते मूले हेतुशास्त्राश्रयाद् द्विजः।
स साधुभिर्बहिष्कार्यो नास्तिको वेदनिन्दकः।।९।।
वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्।।१०।।
अर्थकामेष्वसक्तानां धर्मज्ञानं विधीयते।
धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः।।११।।
वैदिकैः कर्मभिः पुण्यैर्निषेकादिर्द्विजन्मनाम्।
कार्य्यः शरीरसंस्कारः पावनः प्रेत्य चेह च।।१२
**केशान्तः षोडशे वर्षे ब्राह्मणस्य विधीयते।**
राजन्यबन्धोर्द्वाविंशे वैश्यस्य द्वयधिके ततः।।12।। मनु0 अ0 2।।

मनुष्यों को सदा इस बात पर ध्यान रखना चाहिये कि जिसका सेवन रागद्वेषरहित विद्वान् लोग नित्य करें, जिसको हृदय अर्थात् आत्मा से सत्य कर्त्तव्य जानें, वही धर्म माननीय और करणीय है।।1।।

क्योंकि इस संसार में अत्यन्त कामात्मता और निष्कामता श्रेष्ठ नहीं है। वेदार्थज्ञान और वेदोक्त कर्म ये सब कामना ही से सिद्ध होते हैं।।2।।

जो कोई कहे कि कि मैं निरिच्छ और निष्काम हूँ वा हो जाऊँ तो वह कभी नहीं हो सकता क्योंकि सब काम अर्थात् यज्ञ, सत्यभाषणादि व्रत, यम नियमरूपी धर्म आदि संकल्प ही से बनते हैं।।3।।

क्योंकि जो—जो हस्त, पाद, नेत्र, मन आदि चलाये जाते हैं वे सब कामना ही से चलते हैं। जो इच्छा न हो तो आंख का खोलना और मीचना भी नहीं हो सकता।।4।।

इसलिये सम्पूर्ण वेद, मनुस्मृति तथा ऋषिप्रणीत शास्त्र, सत्पुरुषों का आचार और जिस—जिस कर्म में अपना आत्मा प्रसन्न रहे अर्थात् भय, शंका, लज्जा जिसमें न हो उन कर्मों का सेवन करना उचित है। देखो; जब कोई मिथ्याभाषण, चोरी आदि की इच्छा करता है तभी उसके आत्मा में भय, शंका, लज्जा अवश्य उत्पन्न होती है इसलिये वह कर्म करने योग्य नहीं।।5।।

मनुष्य सम्पूर्ण शास्त्र, वेद, सत्पुरुषों का आचार, अपने आत्मा के अविरुद्ध अच्छे प्रकार विचार कर ज्ञाननेत्र करके श्रुति—प्रमाण से स्वात्मानुकूल धर्म में प्रवेश करे।।6।।

क्योंकि जो मनुष्य वेदोक्त धर्म और जो वेद से अविरुद्ध स्मृत्युक्त धर्म का अनुष्ठान करता है वह इस लोक में कीर्ति और मरके सर्वोत्तम सुख को प्राप्त होता है।।7।।

श्रुति वेद और स्मृति धर्मशास्त्र को कहते हैं। इनसे सब कर्त्तव्याकर्त्तव्य का निश्चय करना चाहिए।।8।।

जो कोई मनुष्य वेद और वेदानुकूल आप्तग्रन्थों का अपमान करे उसको श्रेष्ठ लोग जातिबाह्य कर दें। क्योंकि जो वेद की निन्दा करता है वही नास्तिक कहाता है।।9।।

क्रमशः

# श्री अशफाक उल्ला खाँ –आर्यमुनि वानप्रस्थ

## ('काकोरी के शहीद' नामक पुस्तक से)

अशफाक उल्ला खाँ पहले मुसलमान थे, जिन्हें षड्यन्त्र के मामले में फाँसी हुई। स्वतन्त्रता के इतिहास में, जब से राजनीतिक षड्यन्त्रों की चर्चा सुनने में आयी, अनेक आत्माएँ फाँसी और गोली का शिकार बना दी गयीं परन्तु आज तक किसी मुसलमान को ऐसा शिकार बनते हुए नहीं सुना गया था। इससे जनता में यह धारणा बैठ गयी थी कि मुसलमान, लोग षडयन्त्रों में भाग नहीं ले सकते। किन्तु श्री अशफाक उल्ला खाँ ने इस धारणा को गलत साबित कर दिया। उनका हृदय बड़ा विशाल और विचार बड़े उदार थे। कुछ अदूरदर्शी मुसलमानों की भाँति ''मैं मुसलमान, वह काफिर' आदि के संकीर्ण भाव उनके हृदय में घुसने ही नहीं पाये। सबके साथ सम–व्यवहार करना उनका सहज स्वभाव था। निर्द्वन्द्वता, लगन, दृढ़ता, प्रसन्नता उनके स्वभाव के विशेष गुण थे। वे कवि भी थे। उन्होंने बहुत ही अच्छी–अच्छी कविताएँ, जो स्वदेशानुराग से शराबोर हैं, बनायी थीं। कविता में वे अपना उपनाम 'हसरत' लिखते थे। अपनी कविताओं को प्रकाशित कराने का प्रयत्न उन्होंने कभी नहीं किया। कहते–''हमें नाम पैदा करना करना तो है नहीं अगर नाम पैदा करना होता तो क्रान्तिकारी काम छोड़ 'लीडरी' न करता?'' आपकी बनायी हुई कविताएँ अदालत आते–जाते अक्सर, काकोरी के अभियुक्त गाया करते थे।

श्री अशफाक उल्ला खाँ वारसी 'हसरत' शाहजहाँपुर के रहने वाले थे। इनके खानदान के लोगों का शुमार वहाँ के रईसों में है। बचपन में इनका मन पढ़ने–लिखने में न लगता था। 'खनौत' में तैरने, घोड़े की सवारी करने और भाई की बन्दूक लेकर शिकार खेलने में इन्हें बड़ा आनन्द आता था। बड़े सुडौल, सुन्दर और स्वस्थ जवान थे। चेहरा हमेशा खिला हुआ रहता और बोली प्रेम में सनी हुई बोलते थे। ऐसे हट्टे–कट्टे सुन्दर नौजवान बहुत कम दिखायी पड़ते हैं। बचपन से ही उनमें स्वदेशानुराग था। देश की भलाई के लिए किये जाने वाले आन्दोलनों की कथाएँ वे बड़ी रुचि से पढ़ते थे। धीरे–धीरे उनमें क्रान्तिकारी भाव पैदा हुए। उनको बड़ी उत्सुकता हुई कि किसी ऐसे आदमी से भेंट की जाय, जो क्रान्तिकारी दल का सदस्य हो उस समय मैनपुरी षड़यन्त्र में शाहजहाँपुर के ही रहने वाले एक नवयुवक के नाम भी वारण्ट निकला था। वह नवयुवक और कोई नहीं, श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल' थे। श्री अशफाक को यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि उनके शहर में ही एक आदमी ऐसा है, जैसा कि वे चाहते हैं। किन्तु मामले से बचने के लिए श्री रामप्रसाद भागे हुए थे। जब शाही ऐलान द्वारा सब राजनीतिक कैदी छोड़ दिये गये, तब श्री रामप्रसाद शाहजहाँपुर आये। श्री अशफाक को यह बात मालूम हुई। उन्होंने मिलने की कोशिश की। मिलकर षड्यन्त्र के सम्बन्ध में बातचीत करनी चाही। पहले तो श्री रामप्रसाद ने टालमटोल कर दी। परन्तु फिर अशफाक के व्यवहार और बर्ताव से वे इतने प्रसन्न हुए कि उनको अपना बहुत ही घनिष्ठ मित्र बना लिया। इस वे क्रान्तिकारी जीवन में आये। इस क्षेत्र में पदार्पण करने के बाद वे सदा प्रयत्न करते रहे कि उनकी भाँति और मुसलमान नवयुवक भी क्रान्तिकारी दल के सदस्य बनें। हिन्दू–मुस्लिम एकता के वे बड़े कट्टर थे। उनके इन आचरणों से उनके सम्बन्धी कहते थे कि वे काफिर हो रहे हैं! किन्तु वे इन बातों की कभी परवाह न करते और सदैव एकाग्रचित्त से अपने व्रत पर अटल रहते। जब काकोरी का मामला शुरू हुआ, उनका भी वारण्ट निकला और उन्हें मालूम हुआ, तो वे पुलिस की आँख बचाकर भाग निकले। बहुत दिनों तक वे फरार रहे। कहते हैं, उनसे कहा गया कि रूस या किसी और देश में चले जाओ। किन्तु वे हमेशा यह कहकर टालते गये कि मैं सजा के डर से फरार नहीं हुआ हूँ, मुझे काम करने का शौक है, इसीलिए मैं गिरफ्तार नहीं हुआ। रूस में मेरा काम नहीं, मेरा काम यही है, और मैं यहीं रहूँगा–पर अन्ततः ८ सितम्बर, १९२६ को वे दिल्ली में पकड़ लिये गये। स्पेशल मजिस्ट्रेट ने अपने फैसले में लिखा था कि वे उस समय अफगान दूत से मिलकर पासपोर्ट लेकर बाहर निकल जाने की कोशिश कर रहे थे। वे गिरफ्तार करके लखनऊ लाये गये और श्री शचीन्द्रनाथ बख्शी के साथ उनका अलग से मुकदमा चलाया गया। अदालत में पहुँचने पर पहले ही दिन आपने स्पेशल मजिस्ट्रेट सैय्यद ऐनुद्दीन से पूछा, ''आपने मुझे कभी देखा है? मैं तो आपको बहुत दिनों से देख रहा हूँ। जब से काकोरी का मुकदमा आपकी अदालत में चल रहा है, तब से मैं कई बार यहाँ आकर देख गया।'' जब पूछा गया कि कहाँ बैठा करते थे, तो उन्होंने बताया कि वे मामूली दर्शकों के साथ एक राजपूत के वेश मे बैठा करते थे। लखनऊ में एक दिन पुलिस ने कहा सुपरिण्टेण्डेण्ट भी मुसलमान हैं। हमें तुम्हारी गिरफ्तारी से बहुत रंज है। रामप्रसाद वगैरह हिन्दू हैं इनका उद्देश्य हिन्दू सल्तनत कायम करना है। तुम पढ़े–लिखे खानदानी मुसलमान हो। तुम कैसे इन काफिरों के चक्कर में आये?'' यह सुनते ही श्री अशफाक की आँखें लाल हो गयीं ओर झल्लाकर उन्होंने कहा, ''बहुत हुआ! खबरदार, ऐसी बात फिर कभी न कहियेगा। अव्वल तो पण्डित जी (श्री रामप्रसाद) वगैरह सच्चे हिन्दुस्तानी हैं, उन्हें हिन्दू सल्तनत, सिक्ख राज्य या किसी भी

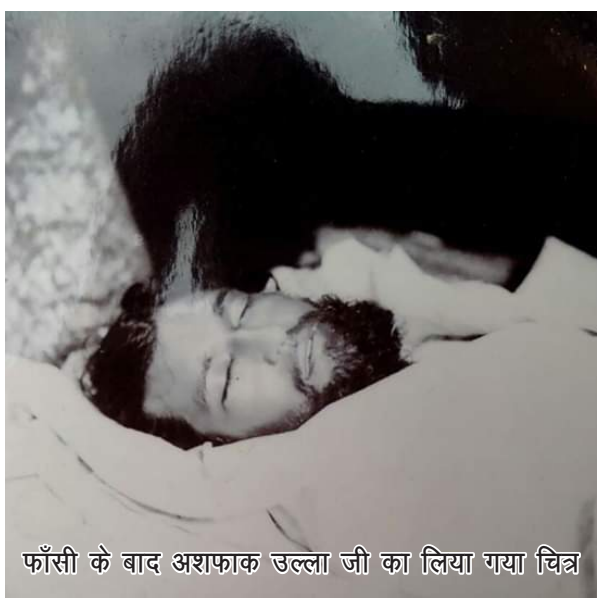

फाँसी के बाद अशफाक उल्ला जी का लिया गया चित्र

फिर्कावाराना सल्तनत से सख्त नफरत है, और आप जैस कहते हैं, अगर वह सत्य भी हो तो मैं अंग्रेजों के राज्य से हिन्दू राज्य ज्यादा पसन्द करूँगा।'' आपने जो उनको काफिर बताया, उसके लिए मैं आपको इस शर्त पर मुआफी देता हूँ कि आप इसी वक्त मेरे सामने से चले जाएँ।'' बेचारे खान बहादुर की सिट्टी–पिट्टी गुम हो गयी और अपना–सा मुँह लिये वहाँ से खिसक गया। मुकदमें में उनका व्यवहार बड़ा मस्ताना था। अदालत के दर्शक और कर्मचारी उनके निर्द्वन्द्वतापूर्ण व्यवहार को देखकर दंग थे। फाँसी का तख्ता सर पर झूल रहा था परन्तु उन्हें बिलकुल परवाह न थी! अन्त में कालेपानी की सजाएँ हुई थीं। अदालत में उन्हें श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल' का लेफ्टीनेण्ट कहा गया था। (वह भीम का–सा बल रखते थे जैसा कि श्री बाल शास्त्री हरदास जी, साहित्याचार्य ने अपनी अंग्रेजी पुस्तक ''सन् १८४७ ई० से सुभाषचन्द्र बोस तक, ६० वर्ष के स्वतन्त्रता संग्राम का इतिहास जिसके भूमिका लेखक श्री एम०एस०गोलवलकर, संचालक आर.एस.एस. हैं–एक जगह लिखा है कि जब ट्रेन रोककर काकोरी में खजाने की तिजोरी निकालकर उसे तोड़ने की चेष्टा की गयी और हथौड़े चलाये गये तो वह किसी से न टूटी, उससें अवश्य हो गया। उस समय एक–एक मिनट घण्टों के समान भारी था। अशफाक उल्ला खाँ उस समय देखभाल कर रहे थे, उन्होंने अपना पिस्तौल मन्मथजी को दिया और खुद हथौड़ा ले भीम के से बल के साथ चलाने लगे और तिजोरी टूटकर खुल गयी मानो, वह किसी बलवान और बहादुर मनुष्य की वाट देख रही थी, अपना हृदय खोलने के लिए।)''

इसके बाद अपीलें और दया–प्रार्थनाओं आदि के व्यर्थ जाने पर फाँसी देना तय पाया। उन्हें इस नतीजे से लेशमात्र भी दुःख नहीं हुआ। जेल में वे कुछ दुबले पड़ गये थे। उनके कुछ मित्रों ने उनसे इसका कारण पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया कि तुम समझते होगे कि काल–कोठरियों ने मुझे दुबला कर दिया है, मगर ऐसी बात नहीं है। मैं आजकल बहुत कम खाता हूँ और इबादत (ईश्वर–भजन) में ज्यादा समय गुजारता हूँ। कम खाने से इबादत में मन खूब लगता है। वे बड़ी मस्त तबियत के आदमी थे। जिन्हें धोकर उन्होंने पहना था पैरों में जूता भी था। उस दिन उबटन लगाकर उन्होंने स्नान किया, और बालों को, जिन्हें इस बीच उन्होंने बढ़ा रखा था, साफ किया। काफी जर्क–बर्क होकर मित्रों से मिले। बड़े खुश थे, फाँसी की कोई चिन्ता ही न थी। मित्रों से बोले 'आज मेरी शादी है।' उसके दूसरे ही दिन सुबह साढ़े छः बजे उन्हें फाँसी हुई। मुकदमा समाप्त हो जाने के बाद वे फैजाबाद जेल भेज दिये गये थें वहीं पर उन्हें फाँसी हुई। वे बहुत हँसी–खुशी के साथ, कुरान शरीफ का बस्ता कन्धे से टाँगे हाजियों की भाँति लब्बैक–२ कहते और कलमा पढ़ते, फाँसी के तख्ते के पास गये। तख्ते को उन्होंने बोसा (चुम्बन) दिया और उपस्थित जनता से कहा कि, ''मेरे हाथ इन्सानी खून से कभी नहीं रंगे, मेरे ऊपर जो इल्जाम लगाया गया, वह गलत है, खुदा के यहाँ मेरा इन्साफ होगा।'' इसके बाद उनके गले में फन्दा पड़ा और खुदा का नाम लेते हुए वे इस दुनिया से कूच कर गये। उनके रिश्तेदार उनकी लाश शाहजहाँपुर ले जाना चाहते थे। इसके लिए उनको अधिकारियों से बहुत मिन्नत–आरजू करनी पड़ी, तब कहीं इजाजत मिली। शाहजहाँपुर ले जाते समय जब इनकी लाश लखनऊ स्टेशन उतारी गयी तब कुछ लोगों को देखने का मौका मिला। चेहरे पर १० घण्टे के बाद भी बड़ी शान्ति और मधुरता थी। बस, केवल आँखों के नीचे कुछ पीलापन था। बाकी चेहरा तो एक सजीव मालूम होता था कि अभी–अभी नींद आ गयी हो। यह नींद अनन्त थी। मृत्यु के कुछ समय पहले वे इन शेरों की रचना भी कर गये थे–

फना (मृत्यु) है सबके लिए
हम पे कुछ नहीं मौकूफ (निर्भर),
बका (शेष) है एक फकत जाते
किब्रिया (ईश्वर) के लिए।
(नाश तो सबका है, एक हमारा ही क्या,
अविनाशी तो केवल परमात्मा ही है।)
तंग आकर हम भी उनके जुल्म से बेदाद से
चल दिये सूये अदम (स्वर्गलोक)
जिन्दाने (जेल) फैजाबाद से

उनकी अन्य कुछ कविताओं का नमूना यह है–

यूँ ही लिक्खा था किसमत में
चमन पैराये आलम (ईश्वर) ने,
कि फस्ले गुल में गुशलन
छूटकर है कैद जिन्दां की।
तनहाइये गुरबत (गरीबी) से
मायूस (मजबूरी) न हो 'हसरत'
कब तक न खबर लेंगे याराने वतन (देशवासी) तेरी।
वह जुर्मे आरजू (आकांक्षा) पै
जिस कदर चाहें सजा दे लें,
मुझे खुद ख्वाहिशे ताजीर(इनकार) है मुजजिम हूँ इकरारी।

फाँसी के कुछ घण्टे पहले उन्होंने ये कविताएँ लिखी थी–

कुछ आरजू नहीं है, है आरजू तो यह है,
रख दे कोई जरा सी खाके वतन (मातृभूमि) कफन में।
ऐ पुख्ताकारे–उल्फत (प्रेमी) हुशियार डिग न जाना,
मैराजे आशकां (पराकाष्ठा) है इस दार और रसन
(सूली की रस्सी और तख्ता) में।।
मौत और जिन्दी है दुनिया का सब तमाशा,
फरमान(आदेश) कृष्ण का था,
अर्जुन को बीच रन में।
जिसने हिला दिया था दुनिया को एक पल में।।

शेष पृष्ठ ४ पर

# स्वयं को ईश्वर को अर्पण कर दें

एक नन्हीं सी बच्ची अपने पिता के साथ जा रही थी। रास्ते में पानी आया देखकर, पिता ने बच्ची से कहा कि तुम मेरा हाथ पकड़ लो। बच्ची ने कहा कि नहीं पिता जी, आप मेरा हाथ पकड़ लो। पिता ने कहा कि इसमें क्या अन्तर पड़ता है? तो बच्ची बोली कि अंतर पड़ता है। मैं असावधानी के कारण आपका हाथ छोड़ सकती हूँ, परन्तु आप मेरा हाथ नहीं छोड़ेंगे। पिता ने बच्ची का हाथ पकड़ लिया और बच्ची निश्चित होकर चलने लगी। उसे दृढ़ विश्वास था कि उसका पिता उसे गिरने व फिसलने नहीं देगा। वह उसे हर हालत में संभाले व थामे रखेगा।

आध्यात्मिक जगत् में भी हम सब बच्चों के एक ही पिता परम–पिता परमात्मा हैं। ये पिता सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी व दयालु हैं। हम बच्चों में से कई बच्चों के एक ही पिता परम–पिता परमात्मा हैं। ये पिता सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी व दयालु हैं। हम बच्चों में से कई बच्चे तो इस चेतन पिता की सत्ता को स्वीकार नहीं करते हैं अर्थात् नास्तिक हैं। वे सदा न+अस्ति की रट लगाए रहते हैं, उनका मानना है कि ईश्वर नाम की वस्तु है ही नहीं। जो मानते हैं कि ईश्वर भी चेतन सत्ता है, वे स्वयं को आस्तिक मानते हैं। ईश्वर पर विश्वास भी करते हैं और अपने–अपने कई इष्टदेव मानकर अपने ही ढंग से उनकी उपासना करते हैं। विडम्बना तो यह हे कि स्वयं को श्रद्धालु व ईश्वर भक्त समझते हैं, परन्तु हर समय भयभीत व आशंकित रहते हैं। भजन तो बोलते हैं ''अब सौंप दिया इस जीवन का, सब भारत तुम्हारे हाथों में किन्तु शब्दों के अर्थ व भाव नहीं जानते, जानते भी हैं तो अनुभव नहीं करते। यदि जानते होते तो भार सौंपने के पश्चात् स्वयं को हल्का अनुभव करते। प्रायः देखने में तो यही आता है कि हम इच्छाओं व चिन्ताओं के बोझ से दबे पड़े हैं।

हमारा लौकिक पिता तो अल्पज्ञान वाला, अल्पशक्ति वाला, सीमित साधनों वाला है। यह पिता तो पूरा–पूरा न्याय भी नहीं कर सकता है। इस पिता के साथ हमारा संबन्ध भी अनित्य है। दूसरी ओर हमारा पिता परमात्मा है, जिसके साथ हमारा नित्य संबन्ध है। यह संबन्ध भी अनादि काल से है और अनादि काल तक रहेगा। वह कभी भी हमें छोड़ता नहीं है और उसने हम बच्चों को उत्तम–उत्तम पदार्थ बनाकर दान में दे रखे हैं। अपनी सर्वव्यापकता के कारण से वे हम बच्चों को सहज व सुगमता से उपलब्ध हैं। अपनी ही अविद्या के कारण हम उसे दूर समझ रहे होते हैं और कई बार आशंकित भी हो उठते हैं कि वह हमारी प्रार्थना सुन भी रहा है या नहीं? जबकि सर्वज्ञता के गुण से गुणी पिता हमें जान, सुन व देख रहा है।

प्रश्न यह उठता है कि नन्हीं सी बच्ची के समान हम आश्वस्त व भयमुक्त क्यों नहीं हो रहे हैं? जरा सा इस पर चिंतन, मनन करें कि भूल कहां हो रही है और भूल को पकड़कर सुधारने का प्रयास करें। सब से बड़ी भूल है कि हम केवल शब्दों के जाल में अथवा मात्र–कर्मकाण्ड में उलझे रहते हैं। स्वयं को आन्तरिक गहराई में उतारकर परमात्मा को समर्पित नहीं हो पाते। समर्पण करने में चूक जाते हैं, तो भयमुक्त कैसे हो सकते हैं। श्रद्धा और दृढ़–विश्वास के साथ अपना हाथ पिता के हाथों में दे दिया और स्वयं निश्चित हो गई कि अब उसका पिता हर परिस्थिति में उसका सच्चा साथी बना रहेगा।

हम बच्चे भी अपने परमपिता परमेश्वर में सच्ची श्रद्धा व दृढ़–विश्वास के साथ समर्पित हो जाएँ। स्वयं को ईश्वर के अर्पण कर दें। ईश्वर के प्रति अगाध श्रद्धा उत्पन्न करें। ईश्वर के स्वरूप को भली–भांति जानकर उसकी अतिप्रेम से भक्ति, उपासना करें। अपनी समस्त क्रियाएँ ईश्वर को परमपिता मानकर उसको अर्पण कर दें। ऋषि पतंजलि जी ने भी समस्त कर्मों के समर्पण के साथ ईश्वर की उपासना को ही ईश्वर–प्रणिधान के अन्तर्गत लिया है। ईश्वर–प्रणिधान अर्थात् समर्पण को ही व्यावहारिक रूप दें, केवल शब्दों में ही न उलझे रहें। नन्दहीं सी बच्ची के समान हम परमपिता परमात्मा के ही नन्हें–नन्हें बच्चे हैं। हम भी परमपिता परमात्मा की दृष्टि में सहायता के पात्र बन जाएंगे व सदैव के लिए भयमुक्त रहेंगे।

पृष्ठ १ का शेष

## भारतीय संस्कृति सभ्यता की पहचान है गुरु शिष्य परम्परा....

वास्तविक गुरु को खोजने के लिए वास्वतविक शिष्य का होना बहुत जरूरी है। एक सच्चा शिष्य ही सच्चा गुरू हो सकता है। सम्बुद्ध गुरु शिष्य का समग्ररूपेण रूपांतर करता है। यानि व्यक्ति 'गुरु पूर्व' और 'गुरु पश्चात' इन दोनों श्रेणियों को पार करने के लिए बहुत सी विधियाँ और नीति–नियम है, जो प्रत्येक गुरु अपनी परम्परा के अनुसार तय करता है।

विश्व विजयी सिकन्दर का गुरू डायोजनीय जी सिंकदर को एक अति महत्वकांक्षी युवराज के रूप में अभिप्रेरित करता है और बाद में जब वही डायोजनीज भारत प्रवास के दौरान आचार्य चाणक्य को अपना गुरु मान लेता है, तो सिंकदर को बीच अभियान से वापस ग्रीक लौटने के लिए राज़ी भी कर लेता है। कहा जाता है कि सिंकदर की मरते वक्त अपने दोनों हाथ ताबूत से बाहर लटकाने की इच्छा आचार्य चाणक्य द्वारा सिंकदर के गुरु डायोजनीज को दिए गए एक प्रेरक किन्तु सूक्ष्म उपदेश का ही नतीजा थी।

आज तथाकथित गुरुओं की फौज एक भय बनकर टेलिविजन पर अवतरित हो रही है। जो खुद को विश्वप्रसिद्ध बताकर भोले–भाले पीड़ित लोगों को ठगने का काम कर रहे हैं। टी वी पर अपने वाले ज्यादातर बाबा पैसा भरकर अपना प्रोग्राम प्रस्तुत करते हैं। अपना भविष्य, भूत, वर्तमान, कुछ ज्ञात नहीं दुनिया का भला करने निकले हैं। हमारा देश सर्वदा ऋषियों की परम्परा को मानता है गुरूओं के आदेशों पर चलने वाला है लेकिन वह परम्परा कहीं विलुप्त हो गयी है गुरु पूर्णिमा गुरू शिष्य परम्परा का प्रतीक है और आज संदेश दे रही है काश कोई विरजानन्द सा गुरु फिर मिल जाये।

विश्व के सब ही देशों के अन्दर स्वर्ग था ये कभी देश मेरा।
शिष्य बनकर रहे दुनिया वाले गुरु था ये कभी देश मेरा।

पृष्ठ ३ का शेष

## श्री अशफाक उल्ला खाँ...

अफसोस! क्यों नहीं है वह रूह अब बदन में?
सैयाद जुल्म पैशा (पेशेवर चिड़ीमार) आया है
जब से 'हसरत'
हैं बुलबुलें कफस (पिंजरा) में
जागोजगन (चील कौआ) चमन में।
न कोई इंगलिश न कोई जर्मन,
न कोई रशियन न कोई तुर्की।
मिटाने वाले हैं अपने हिन्दी,
जो आज हमको मिटा रहे हैं।
जिसे फना (मृत्यु) वह समझ रहे हैं,
बका (शेष) का है राज (भेद)
इसी में मजमिर (भरा हुआ),
नहीं मिटाने से मिट सकेंगे,
वो लाख हम को मिटा रहे हैं।
खमोश 'हसरत' खमोश 'हसरत'
अगर है जजबा वतन (देश प्रेम) का दिल में,
सजा को पहुँचेंगे अपनी बेशक,
जो आज हमको सता रहे हैं।
बुजदिलों ही को सदा मौत से डरते देखा,
गो कि सौ बार उन्हें रोज ही मरते देखा।
मौत से वीर को हमने नहीं डरते देखा,
तख्तए मौत पै भी खेल ही करते देखा।
मौत एक बार जब आना है तो डरना क्या है?
हम सदा खेल ही समझा किये, मरना क्या है?
वतन हमेशा रहे शादकाम(सम्पन्न) और आजाद,
हमारा क्या है, अगर हम रहे, रहे, न रहे।

मरते समय वे देशवासियों के नाम एक सन्देश भी छोड़ गये। सन्देश का सारांश यहाँ दिया जाता है– ''भारतमाता के रंगमंच पर अपना पार्ट अब हम अदा कर चुके। हमने गलत सही जो कुछ किया, वह स्वतन्त्रता–प्राप्ति की भावना से किया। हमारे इस काम की प्रशंसा करेगा और कोई निन्दा। किन्तु हमारे साहस और वीरता की प्रशंसा हमारे दुश्मनों तक को करनी पड़ी है। क्रान्तिकारी बड़े वीर योद्ध और बड़े अच्छे वेदान्ती होते हैं। किन्तु बात ऐसी नहीं है। इतनी लम्बी मियाद तक हमारा मुकदमा चला मगर हमने किसी एक गवाह तक को भयत्रस्त करने की चेष्टा नहीं की, न किसी मुखबिर को गोली मारी। हम चाहते तो किसी गवाह, किसी खुफिया पुलिस के अधिकारी या किसी अन्य ऐसे ही आदमी को मार सकते थे। किन्तु यह हमारा उद्देश्य नहीं था। हम तो कन्हाई लाल दत्त, खुदीराम बोस, गोपीमोहन साहा आदि की स्मृति में फाँसी पर चढ़ जाना चाहते थे।

जजों ने हमें निर्दय, बर्बर, मानव–कलंक आदि विशेषणों से याद किया है। किन्तु हम पूछते हैं कि क्या इन जजों ने जलियाँवाला बाग में डायर को गोली चलाते देखा या सुना नहीं? क्या उसने निशस्त्र भारतीयों–स्त्री, पुरुष, बाल, वृद्ध सब पर गोलियाँ नहीं चलायी थीं? कितने जजों ने उसे इन विशेषणों से विभूषित किया? फिर क्या यह मजाक हमारे ही साथ उड़ाने को है?

भारतीय भाइयों, आप कोई हों, चाहे जिस धर्म या सम्प्रदाय के अनुयायी हों, परन्तु आप देश–हित के कार्यों में एक होकर योग दीजिए। आप लोग व्यर्थ में लड़–झगड़ रहे हैं। सब धर्म एक हैं, रास्ते चाहे भिन्न–भिन्न हों, परन्तु लक्ष्य सबका एक ही है। फिर यह झगड़ा बखेड़ा क्यों? हम मरने वाले काकोरी के अभियुक्तों के लिए आप लोग एक हो जाइए और सब मिलकर नौकरशाही का मुकाबला कीजिए। यह सोचकर कि सात करोड़ मुसलमान भारतवासियों में मैं सबसे पहला मुसलमान हूं जो भारत की स्वतन्त्रता के लिए फाँसी पर चढ़ रहा हूँ, मैं मन ही मन अभिमान का अनुभव कर रहा हूं। किन्तु मैं यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि मैं हत्यारा नहीं था, जैसा कि मुझे साबित किया गया है।

अब मैं विदा होता हूँ। ईश्वर आप सबका भला करें। इस अवसर पर सैय्यद ऐनुद्दीन मजिस्ट्रेट, श्री खैरातअली पब्लिक प्रासीक्यूटर, सी.आई.डी. के अधिककारी खासकर खान बहादुर सतदुक हुसैन साहब तथा अन्य गवाहों को धन्यवाद न देता अनुचित होगा, क्योंकि इन्हीं की कृपा से हमको यह मान–मर्यादा प्राप्त हुई है। मेरे परिवार में आज तक देश–सेवा के लिए कोई त्याग न हुआ था। अब यह कलंक छूट जायेगा। अन्त में अपने साथी अभियुक्तों तथा मुखबिरों और इकबाली मुलजिमों से भी 'वन्दे' करता हूँ।

सबको आखिरी सलाम। भारतवर्ष सुखी हो। मेरे भाई आनन्द लाभ करें।''

प्रेरक प्रसंग–

# ये तेरा घर–ये मेरा घर

**संकलन– प्रदीप कुमार शास्त्री, गुरूकुल पूठ**

एक सेठ जी थे, जो दिन–रात अपना काम–धँधा बढ़ाने में लगे रहते थे। उन्हें तो बस, शहर का सबसे अमीर आदमी बनना था। धीरे–धीरे पर आखिर वे नगर के सबसे धनी सेठ बन ही गए।

इस सफलता की खुशी में उन्होंने एक शानदार घर बनवाया। गृह प्रवेश के दिन, उन्होंने एक बहुत शानदार पार्टी का आयोजन किया। जब सारे मेहमान चले गए तो वे भी अपने कमरे में सोने के लिए चले आए। थकान से चूर, जैसे ही बिस्तर पर लेटे, एक आवाज़ उन्हें सुनायी पड़ी...

"मैं तुम्हारी आत्मा हूँ, और अब मैं तुम्हारा शरीर छोड़ कर जा रही हूँ !!"

सेठ घबरा कर बोले, "अरे! तुम ऐसा नहीं कर सकती!, तुम्हारे बिना तो मैं मर ही जाऊँगा। देखो!, मैंने वर्षों के तनतोड़–परिश्रम के बाद यह सफलता अर्जित की है। अब जाकर इस सफलता को आमोद–प्रमोद से भोगने का अवसर आया है। सौ वर्ष तक टिके, ऐसा मजबूत मकान मैनें बनाया है। यह करोड़ों रूपये का, सुख सुविधा से भरपूर घर, मैंने तुम्हारे लिए ही तो बनाया है!, तुम यहाँ से मत जाओ।"

आत्मा बोली, "यह मेरा घर नहीं है, मेरा घर तो तुम्हारा शरीर था, स्वास्थ्य ही उसकी मजबूती थी, किन्तु करोड़ों कमाने के चक्कर में, तुमने इसके रख–रखाव की अवहेलना की है। मौज–शौक के कबाड़ तो भरता रहा, पर मजबूत बनाने पर किंचित भी ध्यान नहीं दिया। तुम्हारी गैर जिम्मेदारी ने इस अमूल्य तन का नाश ही कर डाला है।"

आत्मा ने स्पष्ट करते हुए कहा, "अब इसे ब्लड प्रेशर, डायबिटीज, थायराइड, मोटापा, कमर दर्द जैसी बीमारियों ने घेर लिया है। तुम ठीक से चल नहीं पाते, रात को तुम्हें नींद नहीं आती, तुम्हारा दिल भी कमजोर हो चुका है। तनाव के कारण, ना जाने और कितनी बीमारियों का घर बन चुका है, ये तुम्हारा शरीर!!"

"अब तुम ही बताओ, क्या तुम किसी ऐसे जर्जरित घर में रहना चाहोगे, जिसके चारों ओर कमजोर व असुरक्षित दीवारें हो, जिसका ढाँचा चरमरा गया हो, फर्नीचर को दीमक खा रही हो, प्लास्टर और रंग–रोगन उड़ चुका हो, ढंग से सफाई तक न होती हो, यहाँ वहाँ गंदगी पड़ी रहती हो। जिसकी छत टपक रही हो, जिसके खिड़की दरवाजे टूटे हों!! क्या रहना चाहोगे ऐसे घर में? नहीं रहना चाहोगे ना!! ... इसलिए मैं भी ऐसे आवास में नहीं रह सकती।"

सेठ पश्चाताप मिश्रित भय से काँप उठे!! अब तो आत्मा को रोकने का, न तो सामर्थ्य और न ही साहस सेठ में बचा था। एक गहरी निश्वास छोड़ते हुए आत्मा, सेठ जी के शरीर से निकल पड़ी... सेठ का पार्थिव बंगला पडा रहा। 'ये कहानी आज अधिकांश लोगों की हकीकत है। सफलता अवश्य हासिल कीजिए, किन्तु स्वास्थ्य की बलि देकर नहीं। अन्यथा सेठ की तरह मंजिल पा लेने के बाद भी, अपनी सफलता का लुत्फ उठाने से वंचित रह जाएँगे!! आइये आज से ही सुबह उठे, चले, दौड़े तथा व्ययाम करें।'

'हम पहले पैसा कमाते है नौकरी/व्यवसाय में शरीर से समझौता करके बाद में हस्पताल में पैसा खर्चते हैं

# अध्यापकों का शिक्षा के प्रति उदासीनता

**प्रस्तुति –हरीश कुमार शास्त्री**

समाज में जो विकृतियाँ हैं उनमें अध्यापक भी कम दोषी नहीं हैं। आज के अधिकांश अध्यापक सब कुछ हैं–क्रूर, लोभी, लालची अनेक दुर्व्यसनरत अर्थ पिशाच, पर अध्यापक नहीं है। अध्यापक को प्रशिक्षण में पढ़ाया जाता है कि दण्ड और पुरस्कार में छात्र के प्रति दण्ड का प्रयोग कम से कम होना चाहिए, क्योंकि दण्ड और पुरस्कार में छात्र के प्रति दण्ड का प्रयोग कम से कम होना चाहिए, क्योंकि दण्ड एक नकारात्मक प्रवृत्ति है। प्रोत्साहन एवं पुरस्कार प्रयोग, सकारात्मक प्रवृत्ति होने के कारण अधिक से अधिक होना चाहिए। पर आज का अधिकांश अध्यापक प्रशिक्षण को मात्र नौकरी की सीढ़ी मानते हैं। कुछ प्रशिक्षण विद्यालयों में न तो नियमित कक्षाएं चलती है न उनका कोई महत्व ही समझा जाता है। तब शिक्षण में प्रोत्साहन का महत्व क्या समझा जाता है। तब शिक्षण में प्रोत्साहन का महत्त्व क्या समझा जाये। समाचार मिलते है कि शिक्षक–शिक्षिकाएँ अत्यन्त क्रूर ढंग से बच्चों को साथ साथ व्यवहार करते हैं यहां तक कि विद्यालयों के विरूद्ध धरना, प्रदर्शन, हंगामा एक मात्र उपाय रह जाता है। गुरूब्रह्मा, गुरूर्विष्णु... के विरूद्ध प्रथम सूचना रिपोर्ट **(FIR)** क्यों करवाई जाती है? इससे शिक्षा, शिक्षण एवं इन संस्थानों की गरिमा तो गिरती ही है, देश में चोर, डकैत, अपहरणकर्ता दुराचारी, स्मगलर, एवं राष्ट्रघाती मनुष्यों की बाढ़ आ जाती है।

अपनी भूमिका का सतर्कता करने वाले अध्यापक भी हैं–पर उनकी संख्या उँगलियों पर गिनने लायक ही है। देश को श्रेष्ठ नागरिक प्रदान करने में उनकी भूमिका महनीय रही है। 'जाग्रत मन' के प्रकरण में एक ऐसे अध्यापक की चर्चा की जा चुकी है, जिसका आचरण बच्चों में अच्छे संस्कार प्रदान करता है। एक और उदाहरण द्रष्टव्य है–

एक अत्यन्त गरीब परिवार का बालक निपट देहात में जन्म लेता है। माता–पिता अनपढ़ हैं। बच्चे को पढ़ाने की सामर्थ्य उनमें नहीं है। उसके मामा पढ़ाने के लिए ननिहाल ले जाते हैं। प्यार करते हैं। और सहानुभूति पूर्वक पढ़ाते हैं। उन दिनों कक्षा ४ की परीक्षा प्रति उप विद्यालय निरीक्षक **(S.I.D.)** की देखरेख में कई विद्यालयों को एक केन्द्र में रखकर ली जाती थी। यह बालक उस परीक्षा में केन्द्र में सर्वोच्च अंक प्राप्त करता है। यह गन्ध बिखेरने वाली कली अब मुरझाने वाली ही थी कि अध्यापक उसे छात्रवृत्ति की परीक्षा में बैठा देते हैं। वह छात्रवृत्ति प्राप्त करता है। कक्षा ५ में पढ़ने के लिए जूनियर हाईस्कूल के द्वार उसके लिए खुल जाते हैं। सन् १९४०–५० में छात्रवृत्ति की छोटी राशि भी उसके लिए सहायक बन जाती है। यह उसका सौभाग्य ही था अथवा उन दिनों अधिकांश अध्यापक कर्तव्यनिष्ठ एवं उदारमना होते थे कि इस विद्यालय के अध्यापक भी उसे सहानुभूति एवं मनोयोग से पढ़ाते हैं। जनपदीय स्तर पर होने वाली जूनियर हाई स्कूल की परीक्षा में वह जनपद में प्रथम स्थान प्राप्त करता है। अब अध्यापकों की महनीय भूमिका देखिए। वे उस बालक का प्रवेश राजकीय इण्टर कॉलेज, मैनपुरी (उ.प्र.) में इसलिए कराते हैं ताकि सरकारी स्तर से उसे अच्छी छात्रवृत्ति मिल सके जो गैर सरकारी विद्यालयों में सम्भव नहीं। राजकीय विद्यालय में शिक्षण शुल्क से भी छूट मिल जाती है। इसे छात्रवृत्ति मिलती है और वह एक–दो ट्यूशन द्वारा भी धनोपार्जन कर इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण करता है। अब वह मध्य प्रदेश में सहायक अध्यापक से प्रोफेसर एवं गोवा के डिप्टी डायरेक्टर (शिक्षा विभाग) के पद से सेवानिवृत्त होता है। उसके इस सौभाग्य में जहाँ उसकी प्रतिभा, परिश्रम और लगन की भूमिका है उन अध्यापकों के प्रयास एवं मार्गदर्शन को नकारा नहीं जा सकता है।

स्वाधीनता से पूर्व प्राथमिक एवं जूनियर हाई स्कूलों के अध्यापक साधारण पढ़े लिखे होते थे। अधिकतर अध्यापक केवल मिडिलपास (कक्षा ७) उत्तीर्ण होते थे। उनके वेतन भी उपेक्षित थे। तब शिक्षा का स्तर बहुत अच्छा होता था। आजकल ग्रेजुयेट बी.टी.सी./बी.एड. और **TET** उत्तीर्ण अधिकांश अध्यापक ४०–५० हजार रूपए मासिक लेकर भी कर्तव्य बोध की अनदेखी कर लज्जा अनुभव नहीं करते। विद्यालयों से अनुपस्थित दूसरे व्यवसायों/ट्यूशन से धनोपार्जन कर शिक्षा पर कुठराघात कर रहे हैं। उन दिनों अध्यापक का वेतन मात्र ३५/', ४५/–, या ६०/– प्रतिमास हुआ करता था। यह ठीक है तब मंहगाई इतनी नहीं थी। तथापि अब अन्य दूसरे कर्मचारियों की तुलना में अध्यापकों के वेतन में बेतहाशा उछाल हुआ है। तब अध्यापकों को तीन–तीन, चार–चार मास वेतन नहीं मिलता था फिर भी वे शिक्षण के प्रति समर्पित थे उनके समर्पण का उदाहरण द्रष्टव्य है–

पूर्व माध्यमिक विद्यालयों (जूनियर हाई स्कूलों) के प्रधानाध्यापक अक्टूबर मास से छात्रों को विद्यालय में रात्रि को रोका करते थे। उन्हें निष्ठापूर्वक बिना लोभ लालच या अतिरिक्त शुल्क के पढ़ाया करते थे। छात्र भी अपने विषय में पारंगत हो जाते थे। कक्षा ७ की जिला बोर्ड की सार्वजनिक परीक्षा में इन विद्यालयों का परीक्षा फल, बिना नकल, ७५ से ८५ प्रतिशत तक रहता था। विद्यालय छोड़ने के बाद जब कभी छात्रों की इन अध्यापकों से भेंट होती थी, तो वे दौड़कर उनके चरण स्पर्श करते थे। घटनाएँ यहाँ तक बतलाती है ऐसे अध्यापकों के जो शिष्य इंजीनियर डाक्टर, वैरेस्टिर, आई.ए.एस. आदि उन्हें कदाचित मिलते थे तो वे श्रद्धापूर्वक सार्वजनिक स्थानों पर भी उनके चरण स्पर्श करते, उनका कुशल क्षेम पूछते थे। बाजार से ये शिक्षक जब निकलत थे, दूकानदार या जनता भावपूर्ण हृदय से उनका अभिवान करती थी आज के अधिकांश ट्यूशन खोर अध्यापक इस आनन्द की कल्पना भी नहीं कर सकते। समाज इन्ही की प्रतिच्छाया है। सन् १९७६–७७ की एक छोटी सी घटना उल्लेखनीय है स्टेट बैंक पर अध्यापकों के कुछ देयकों का भुगतान हो रहा था। उन्हीं दिनों किसी अध्यापक का अपहरण हो गया था। अध्यापक बैंक पर उसी की चर्चा कर रहे थे। तभी बैंक के काडण्टर पर कार्यरत एक युवा कैशियर ने टिप्पणी की 'मास्टर साहब, अपहरणकर्ता आपके ही शिष्य रहे होंगे। यह टिप्पणी कितनी सारगर्भित थी अब हमारी शिक्षा समाज में चोर, डकैत, अपहरण कर्ता ही समर्पित कर रही है।'

प्रारम्भ से ही यदि विद्यालयों में सभी क्षेत्रों से बहिष्कृत माल न लगाया गया होता, तुलनात्मक रूप अच्छे वेतनमान देकर अच्छी बुद्धि के चरित्रवान् एवं शिक्षा के लिए समर्पित अध्यापकों की नियुक्ति की जाती तो इतने थानों, पुलिस, कोर्ट–कचहरियों, अस्पतालों एवं दर्जनों फालतू विभागों की आवश्यकता ही नहीं होती पर हमारे देश का यह दुर्भाग्य यथावत् जारी है।

एकै साधै सब सधें, सब साधैं सब जाय।
रहिमन मूलहि सींचिए, फूले–फले अघाय।।

# एक विलक्षण व्यक्तित्व – स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती

**–अरविन्द कुमार शास्त्री, पूर्व छात्र**
**श्री सर्वदानन्द गुरूकुल, साधु आश्रम अलीगढ़**

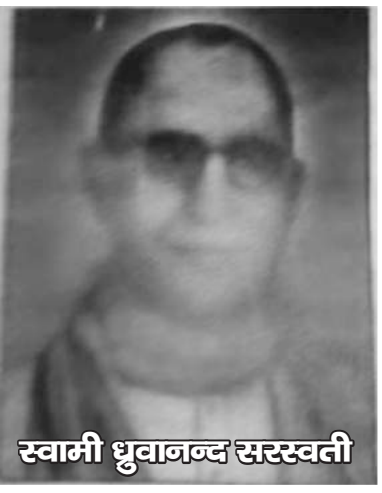
स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती

एक ऐसा चाणक्य जिसे न मन्त्रीपद स्वीकार्य था, न राजपाठ, न धन–सम्पदा न यश–वैभव और न कोई अन्य लालसा थी। समाज के वंचित, शोषित, दलित, गरीब बालकों को शिक्षा–दीक्षा देना तथा लोगों को वैदिक धर्म का उपदेश करना ही उसका प्रमुख कार्य था। वे थे वीतराग सन्त स्वामी सर्वदानन्द जी जिन्हें चन्द्रगुप्त भी ऐसा मिला जो राजा नहीं अपितु राजगुरू (राजाओं का गुरू) बना। जो धुरेन्द्र शास्त्री तथा बाद में ध्रुवानन्द सरस्वती नाम से प्रसिद्ध हुआ।

२०वीं शताब्दी के दूसरे दशक की घटना है कि, वीतराग स्वामी सर्वदानन्द जी आर्य समाज और स्वामी दयानन्द के सपनो को मूर्त रूप देने हेतु अलीगढ़ जनपद में (जहाँ पहले कभी स्वामी दयानन्द ने गुरूकुल होने की कामना व्यक्त की थी) काली नदी के सुरम्य तट पर गुरूकुल की नींव रख रख रहे थे। उन्हें आवश्यकता थी ऐसे विद्या–पिपासुओं की जो ज्ञान के वट–वृक्ष बनकर अज्ञान और पाखण्ड के आतप से लोक शान्ति प्रदान कर सकें। स्वामी जी विद्यार्थियों को पढ़ाने के साथ–साथ आर्य–समाज का प्रचार–प्रसार बड़े समर्पण– भाव से किया करते थे। किंवदन्ती के अनुसार एक दिन स्वामी सर्वदानन्द जी मथुरा से अपने गुरूकुल साधु आश्रम जा रहे थे। मार्ग में 'पानी' नामक गाँव में एक महिला अपने पुत्र को दुःखित भाव से डॉटते हुए कह रही थी, चला जा यहाँ से कहीं, मैं तुम्हें खाने को कहाँ से लाऊँ। दुःखी वृद्धा की विवशता समझकर राह चलते स्वामी जी ने कहा कि–इस बच्चे को मुझे दे दो। मैं इसका भरण–पोषण करूँगा। गरीब ब्राह्मण महिला ने स्वामी जी के साथ अपने पुत्र को भेज दिया। धूल (धूर) में खेलने के कारण इसका नाम 'धूरिया' पड़ गया था। स्वामी जी ने गुरूकुल के भोजनालय में भोजन बनाने का कार्य में इसे नियुक्त कर दिया। अब तक का समय भैंस चराने में ही व्यतीत हुआ था। डॉ० भवानी लाल भारतीय के अनुसार इसने २३ वर्ष तक पशुचारण ही किया। संसाधनों के अभाव में शिक्षा भी न मिल सकी। किसी को अनुमान भी नहीं था कि कीचड़ में पड़ा यह हीरा है जिसे कोई जौहरी पहचान लेगा और इसमें विस्मयकारी द्युति उत्पन्न हो जायेगी।

भोजनालय का कार्य करते–करते धूरिया के मन पढ़ने की इच्छा जाग्रत हुई और समान–वय के छात्रों से वार्ता कर पाणिनीय अष्टाध्यायी ले ली। संभवतः अक्षर ज्ञान पहले से ही था, अतएव पाणिनीय सूत्रों को कण्ठस्थ करना प्रारम्भ कर दिया। एक दिना आटा गूंथते समय 'अइ३ण, ऋलृक्' बोलता हुआ यह स्वामी जी के देख लिया। अन्य छात्रों से भी उसके विषय में जाना तो ज्ञात हुआ कि उसे कई अध्याय अष्टाध्यायी के कण्ठाग्र हो चुके हैं। स्वामी जी ने तत्काल उसे पाकशाला से निकालकर पाठशाला में स्थान दे दिया स्वामी जी ने इन्हें 'धुरेन्द्र' नाम दिया और समीपवर्ती गाँवों में यज्ञादि कराने को भी भेजते थे। धीरे–धीरे धुरेन्द्र की दबी हुई प्रतिभा का प्रस्फुटन स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगा। गुरूकुल साधु आश्रम की औपचारिक शिक्षा के बाद १६१६ ई० में पंजाब विश्वविद्यालय से शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण की। तदनन्तर 'महाराजा संस्कृत कॉलेज, जयपुर से नव्य–न्याय की शिक्षा ली। विद्या नगरी काशी में रहकर भी कुछ दिन अध्ययन किया। अब वह बालक विद्या से मण्डित होकर धूरिया से पं० धुरेन्द्र शास्त्री हो चुका था। यह था स्वामी सर्वदानन्द और उनके गुरूकुल साधु की संगति का महत्व। भर्तृहरि का कथन उचित ही है–

जाडयं धियो हरति सिम्चति वाचिसत्यं,
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तेनोति कीर्ति
सत्सङ्गति कथय किं न करोति पुंसाम्।।

।।नीतिशत पद्य १६।।

गुरूकुलीय संस्कारों के कारण धुरेन्द्र शास्त्री के हृदय में समाज सेवा और वैदिक–धर्म प्रचार का भाव उमड़ रहा था। उस भाव को मूर्त रूप देने से पहले ही उन्हें राजस्थान जाना पड़ा। एक दिन शाहपुराधीश राजाधिराज उम्मेद सिंह स्वामी सर्वदानन्द जी के पास आये और युवराज सुदर्शन को पढ़ाने हेतु आचार्य भेजने का निवेदन करने लगे। स्वामी जी ने अपने योग्य शिष्य धुरेन्द्र शास्त्री को इसके लिया चुना। आज्ञा गुरूणां ह्यविचारणीया (कालिदास, रघु.सर्ग.१४) के अनुसार बड़ों के आदेश पर किसी भी अतिरिक्त विचार किये पालन करने की परम्परा है। अतएव वहाँ गये और युवराज को पढ़ाने का दायित्व स्वीकारा। वहाँ उन्हें १६३६ ई० में 'राजगुरू' की उपाधि से समलंकृत किया गया। शाहपुरा के अतिरिक्त कालाकांर, देवास तथा झालावाड़ आदि अनेक राज्यों के नरेशों ने भी शास्त्री जी को सम्मानित किया और उनके श्रद्धालु भक्त बने। देशी नरेशों के वे सदा श्रद्धाभाजन रहे। (आर्य समाज के बीस बलिदानी पृ० १४६)

आर्य समाज में उनका योगदान विशेष उल्लेखनीय रहा। १६२४ ई० में 'शुद्धि सभा आगरा' के मंत्री चुने गये। शुद्ध सभा का कार्यालय लखनऊ स्थानान्तरित होने पर वहाँ चले गये। आर्य समाज के संयुक्त प्रान्त की प्रतिनिधि सभा के भी प्रधान रहे। १६२६–१६२८ तक गुरूकुल वैद्यनाथ धाम के आचार्य रहे। इसके साथ ही गुरूकुल साधु आश्रम की अनवरत जुड़े रहे। आपके द्वारा यहाँ रोपित वृक्ष आज भी शोभयमान हैं। आपके प्रयासों से गुरूकुल ने अत्यन्त उन्नति की। अफ्रीका, मौरिशस आदि विविध देशों के आर्यजनों ने इनसे प्रभावित होकर साधु आश्रम में भवन–निर्माण हेतु प्रभूत दान भी दिया था, जिससे बनी इमारतें आज भी गुरूकुल में विद्यमान हैं। इन्होंने जुलाई १६५४ ई० साधु आश्रम में ही स्वामी आत्मानन्द सरस्वती से सन्यासाश्रम की दीक्षा लेकर ब्रह्मचर्य से सीधे सन्यास में प्रविष्ट हुये। अब धुरेन्द्र शास्त्री सन्यास लेकर स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती बन गये। विरक्त होकर भी आप समाज, धर्म और राष्ट्र की सेवा से अलग नहीं हुये, अपितु परहित में समर्पित देह को आराम नहीं दिया समाज सेवा वैदिक धर्म प्रचार में अपेक्षाकृत और अधिक गति आयी। संयुक्त प्रान्त ही नहीं सुदूरवर्ती केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़ तथा महाराष्ट्र आदि विभिन्न राज्यों में आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द के सन्देश को प्रचारित करने लगे। इनकी नेतृत्व क्षमता, संगठन, कौशल तथा समर्पण भाव आदि गुणों के कारण इन्हें वैश्विक दायित्व दिया गया, और स्वामी जी को सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा का प्रधान चुना गया। इस महान दायित्व का निवर्हन भी अपने कुशलता पूर्वक किया। आपने अफ्रीका, मॉरिशस, युगाण्डा, जंजीवार थाइलैण्ड, सिंगापुर तथा म्यांमार आदि देशों में आज भी है। १६६२ में ये म्यांमार गये, यहाँ आज भी ३० आर्य समाजे सक्रिय हैं। जिनमें प्रति सप्ताह सत्संग होता है। (दयानन्द संदेश नव. २०१५ पृ० १७)। आपके देहान्त के पश्चात् मॉरिशस के दानी–महानुभावों गुरूकुल साधु आश्रम में आपकी स्मृति में भवन–निर्माण भी कराया। आज भी प्रतिवर्ष हमारे देश के आर्य विद्वान मॉरिशस जाते हैं।

आपने विभिन्न सत्याग्रहों में भी भाग लिया। 'हैदराबाद आर्य सत्याग्रह' में १५०० साथियों के साथ जेल भी गये। १६४६ में सिंध की सरकार द्वारा सत्यार्थ प्रकाश पर प्रतिबन्ध लगाये जाने पर करांची में अन्य आर्य नेताओं के साथ आन्दोलन किया। आपने गाँधी जी के मार्ग का अनुगमन करते हुये राष्ट्रीय आन्दोलनों में भी भाग लिया और अनेक बार जेल की यातनाये सहीं। गो हत्या के विरोध में चलाये गये आन्दोलन का आर्य समाज की ओर आपने ही नेतृत्व किया था। आर्य समाज के प्रशासनिक ढांचे में सुधार तथा आन्तरिक विरोध और विवादों का निपटारा करने में स्वामी ध्रुवानन्द जी का सदास्मरणीय रहेगा। दुर्भाग्य से उनका लिखा साहित्य प्राप्त नहीं होता है। उनकी एक पुस्तक शाहपुर से १६३८ ई० में प्रकाशित हुयी थी। जोकि विवाह संस्कार से सम्बन्धित था। 'वर–वधू के बोलने योग्य मन्त्र इसका शीर्षक था। कर्मकाण्ड में स्वामी दयानन्द–निर्दिष्ट विधि का साग्रह पालन करते तथा करवाते थे। २६ जून १६६५ को आप बम्बई से दिल्ली प्रस्थान कर रहे थे, तभी अचानक हृदयाघात से भौतिक देह का अवसान हो गया। किन्तु यशकाम से वे सदा अमर रहेंगे। जैसे आचार्य द्रोण के साथ अर्जुन और एकलव्य का, धौम्य के साथ अरूणिक का, सान्दीपनि आचार्य के साथ कृष्ण और सुदामा का तथा दण्डी स्वामी विरजानन्द के साथ स्वामी दयानन्द सरस्वती का नाम गुरू–शिष्य परम्परा में जोड़ा जाता है। वैसे ही वीतराग स्वामी सर्वदानन्द के साथ धुरेन्द्र शास्त्री (ध्रुवानन्द सरस्वती) का नाम जुड़ा है। स्वामी सर्वादानन्द का भी परिचय इनकी चर्चा के विना अधूरा लगता है। धन्य है ऐसी गुरू शिष्य परम्परा, जिसने भैंस चराने वाले, ग्राम्य जीवन बिताने वाले व्यक्ति को सुयोग्य आचार्य, कुशल प्रशासक, लोकप्रिय आर्यनेता, वाग्मी, प्रभावशाली संन्यासी तथा राजगुरू के पद पर प्रतिष्ठित किया। स्वामी सर्वादानन्द द्वारा संस्थापित और स्वामी ध्रुवानन्द जी पोषित गुरूकुल प्राचार्य श्री जीवन सिंह जी के आचार्यत्व में योग्य स्नातक निर्माण की दिशा में गतिशील है। अन्त में गुरूकुलों के सम्बन्ध में यही कामना है–

गुरूकुलों की भी लिखी जाये कुछ कहानी आगे,
अब हो दूर इनसे दीनता की निशानी भागे।
उपेक्षित भारतीय संस्कृति के केन्द्र कैसे है।
झड़े पतझड़, इनमें, वासन्ती जवानी जागे।।

# 'पर्यावरण बचेगा तो जीवन बचेगा'

गंगोह (सहारनपुर)–६ जून २०१६ उ.प्र.जनजागरण मंच के तत्वाधान में ४६ वें विश्व पर्यावरण दिवस के अवसर पर 'पर्यावरण बचेगा तो जीवन बचेगा' विषय पर गोष्ठी आयोजित की गयी ।

रामबाग रोड़ स्थित आर्य भवन पर पर्यावरणीय गोष्ठी से पूर्व प्रदूषण मुक्ति के खास साधन यज्ञ–हवन को कर पर्यावरण शुद्धिकरण में सहयोग किया गया। गोष्ठी को सम्बोधित करते हुए उ.प्र.जनजागरण मंच के प्रदेशाध्यक्ष डॉ.वीर सिंह भावुक ने कहा कि हम इतनी हरयाली हड़प चुके हैं कि हमारा राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र रेगिस्तान में परिवर्तित हो रहा है। कचरे की वजह से अपने भारत देश के सौ से अधिक शहर वायु गुणवत्ता परीक्षा में फैल हो गये और श्वसन तन्त्र की बीमारियों से मरने वालों के औसत में भारत दुनिया में नम्बर वन हो गया है। इन सब परिस्थितियों का मूल कारण अतिवादी उपभोग और कम पुर्नोपयोग है। तापमान में बढ़ोतरी का ६० प्रतिशत जिम्मेदार अकेले ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन है। वायुमण्डल में कार्बनडाईऑक्साइड की मात्रा तेजी से बहुतायत में बढ़ी है जो तब घटेगी, जब कार्बन उत्पादों की खपत घटाएंगे और कार्बन अवशोषण करने वाली प्रणालियां बढ़ाएंगे ।

उन्होंने बताया कि संयुक्त राष्ट्र संघ ने विश्व पर्यावरण दिवस हेतू १६७२ में पहली बार निर्देशित किया और प्रथम विश्व पर्यावरण दिवस १६७४ में मनाया गया। भारत की बात करें तो १६८५ से पहले भारत में पर्यावरण का अलग कोई मंत्रालय नहीं था और पर्यावरण के नाम पर अलग से कानून भी नहीं थे।

पटेल पब्लिक स्कूल अंबेहटा की प्रधानाचार्या श्रुति प्रिया आर्या ने कहा कि भारत में लक्षणो का ईलाज तो किया जा रहा है, लेकिन पर्यावरणीय क्षरण के मूल कारणों की रोकथाम की प्राथमिकता बन ही नहीं पा रही ।

मा.भुल्लनसिंह, जसवीर आर्य ने भी विचार व्यक्त किये। संचालन ब्रिजेश सैनी ने किया। गोष्ठी में सुदेश प्रभा आर्या, मधु आर्या, सीमा सैनी, पारुल सैनी, रेखा सिंघल, मा. रतनसिंह, सोमदत्त नामदेव, अमन शर्मा, अंकुर गर्ग, मुनेश सैनी, कंवरपाल विश्वकर्मा, सुरेश भारती, देवीचन्द पांचाल, अनिल बारी, रमेश कोरी, राजपाल कश्यप, सुरेन्द्र आर्य, मुकेश कुमार आदि शामिल रहे।

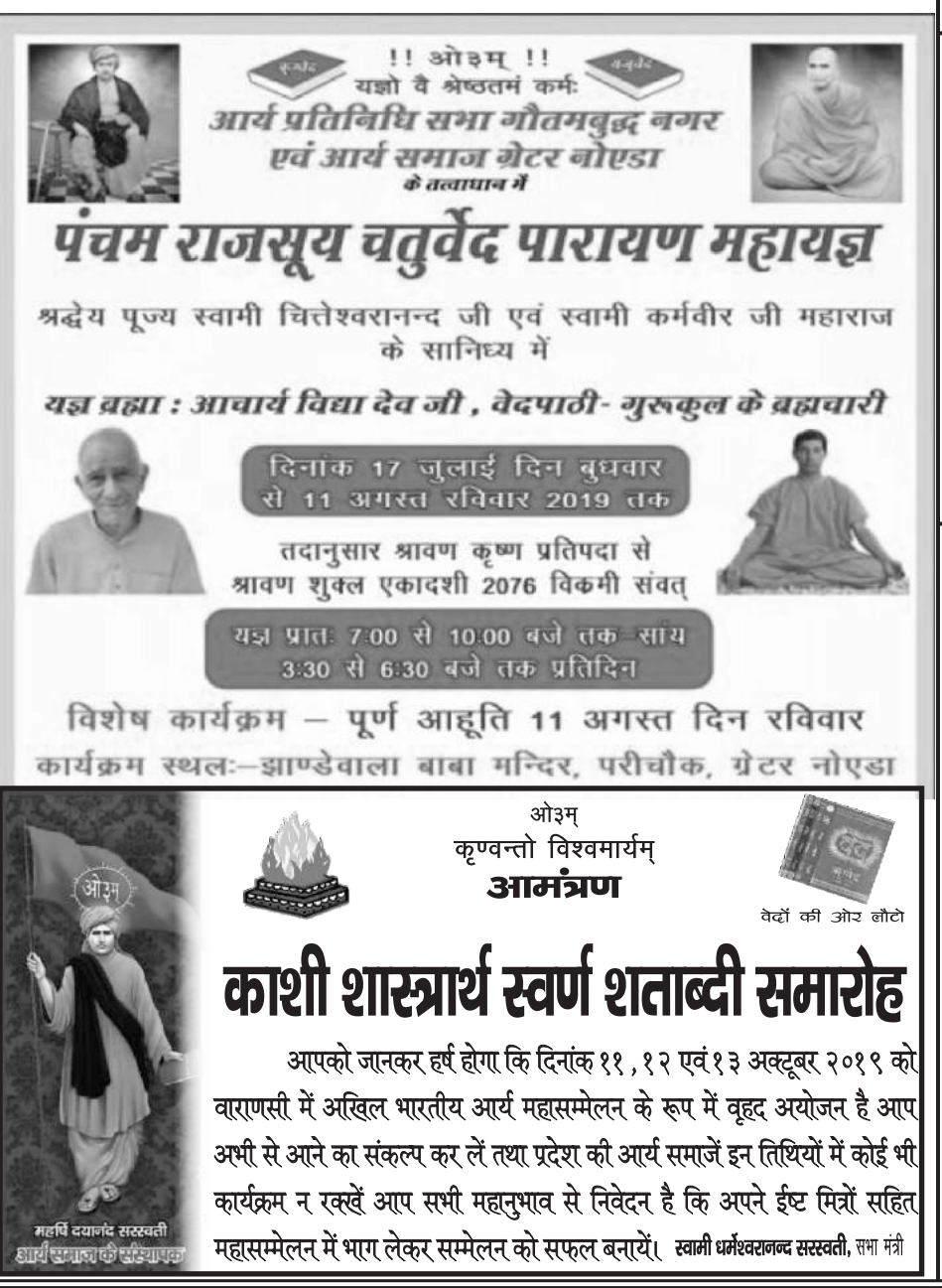





# कौरवों और पांडवों की शिक्षा स्थली रही है पुष्पावती पूठ

गढ़मुक्तेश्वर। जनपद हापुड़ की गढ़ तहसील के अंतर्गत पावन गंगा नदी के तट पर गांव पुष्पावती (पूठ) स्थित है। लेकिन इस स्थान का गौरवशाली इतिहास केवल पन्नों में सिमट कर रह गया है। प्राचीन काल में पुष्पावती को स्वर्ग का द्वार माना गया है। महाभारत काल में पुष्पावती पांडवों की राजधानी हस्तिनापुर का एक भाग था। जो पांडवों की सैरगाह के रूप में प्रसिद्ध रहा। बताया जाता है कि पूठ गुरू द्रोणाचार्य की तोस्थली थी, जहाँ वह अपने शिष्य कौरवों और पाण्डवों को यहीं शिक्षा देते थे। इसके अलावा पूठ एकलव्य की साधना स्थली भी रहा था। वर्तमान में पूठ में गंगा तट पर गुरूकुल की स्थापना कर आचार्य धर्मेश्वरानन्द सरस्वती युवा पीढ़ी के नव निर्माण में लगे हुए हैं। गुरूकुल में पढ़ने वाले छात्रों को वेद पुराणों की शिक्षा के साथ ही धनुर्विद्या, गदा समेत योग की शिक्षा दी जा रही है।

# गुरूकुल राजघाट सम्मेलन में अलीगढ़ से जाएंगें 100 युवा

अलीगढ़। पतंजलि जिला युवा प्रभारी भूपेंद्र शर्मा ने बताया गुरुकुल राजघाट में अक्टूबर माह में होने वाले महासम्मेलन की तैयारी शुरू हो गई जिसमें विदेशों से भी गणमान्य नागरिक पधारेंगे। सम्मेलन में योग प्राणायाम सहित चारों वेदों का पठन–पाठन होगा। रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम के माध्यम से भारत की पौराणिक कथाओं का वणर्न किया जाएगा। सम्मेलन ३ दिन तक चलेगा, जिसकी जिम्मेदारी नरेन्द्र शास्त्री एवं कोलकता के योगेश शास्त्री पर रहेगी। इसमें सहभागिता करने के लिए अलीगढ़ से १०० युवाओं की टीम जाएगी। तैयारी करते हुए प्रथम बैठक का आयोजन प्रातः गुरूकुल के छात्रों के साथ यज्ञ हवन कर बैठक प्रारम्भ की गई। दो सत्रों में बैठक चली। इस अवसर पर सभी ने अपने विचार रखे। इस दौरान प्रमुख रूप से यतेंद्र सिंह आर्य, प्रेमपाल लोधी, नरपत सिंह, नरेंन्द्र शास्त्री आदि रहे।

# वैदिक आश्रम अलीपुर कला का वार्षिकोत्सव

वैदिक आश्रम अलीपुर कला जिला मुजफ्फरनगर मे सत्यमुनि वानप्रस्थी ने पिचहत्रवा जन्मोत्सव यज्ञ मान बनकर यज्ञ और वेद प्रचार के साथ मनाया । जिसमे आचार्य विश्व बन्धु मानव सेवार्थ न्यास के संरक्षक आर्यमुनि वानप्रस्थी मेरठ और यज्ञ के ब्रह्म डाक्टर धीरज आर्य और यज्ञमान सत्यमुनि वानप्रस्थी रहे । वेदप्रचार मे ग्राम अलीपुर खेडी, आर्य समाज मुण्डभर, बाबरी, सोन्टा, बुडीना कला, लाख, बहावडी, अलावलपुर माजरा, सूरजपुर और २५० की संख्या संख्या मे माताये बहने काफी लोग उपस्थित रहे ।

# जिला आर्य प्रतिनिधि सभा की बैठक में चर्चा

भरुआसुमेरपुर, हामिर पुर। आर्य प्रतिनिधि सभा की जनपद इकाई की बैठक में आर्य समाज का संदेश गाँव–गाँ तक पहुंचाने का संकल्प लिया गया। कस्बे के मैथलीशरण मार्ग में आर्य सत्संग भवन में जिला आर्य उप प्रतिनिधि सभा के प्रधान दिनेश चंद आर्य ने ग्रामीण क्षेत्रों में प्रचार–प्रसार करने का निर्णय लिया। गहरौली, मुस्करा, चंदपुरवा, मौहार, पचखुरा बुजुर्ग, कलौलीजार, पारारैपुरा जैसे गांवों को चयनित किया गया।

बैठक में युवाओं को जोड़ने के लिए आर्य वीर दल की शाखाएं संचालित करने, १५ जुलाई से १५ अगस्त तक पौधरोपण करने का फैसला लिया गया। मंत्री लालदीवान यादव, रिवंद्र शुक्ला, रामेश्वर आर्य, रामबिहारी शुक्ला, प्रेम कुमार श्रीवास्तव, हरनारायण, रामविलास शास्त्री, रमेशचंद्र, मनीष कुमार आदि मौजूद रहे। संचालन आर्य वीर दल के प्रांतीय संचालक विवेक कुमार आर्य न किया।

आर्य मित्र
नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूरभाष : ०५२२-२२८६३२८
का० प्रधान- ०९४१२७४४३४१, मंत्री- ०९८३७४०२१९२, व्यवस्थापक- ९३२०९२२२०५
ई-मेल : apsabhaup86@gmail.com ई-मेल आर्य मित्र aryamitrasaptahik@gmail.com

सेवा में,
..............................................
..............................................

# दे हार स्वयं ही हार गयी

– अरविन्द कुमार निर्गुण
शोधकर्ता, संस्कृत विभाग, लखनऊ

जिसकी संस्कृति से क्षणभर में हर रोम-रोम गम्भीर बने,
अनाविद्ध ही जगे गात जब संकेतक बन वीर तने।
'सब को सब बुछ न बना' सूक्ति यह भी इससे ही साबित है,
बौने थे जोकि नहीं मिले, अब लक्ष्य बड़ा प्रस्तावित है।
केवल विकल्प तब विजय बचा, जब हार नहीं मानी मैंने,
दुनियां जाने यह चाह नहीं, अपनी शक्ति जानी मैंने।
भयभीत हमें करने निकली खुद ही तो बन आहार गयी,
न हार हरा सकती हमको दे हार स्वयं ही हार गयी।।1।।

दृढ़निश्चय के आगे न दियां-पर्वत-सागर झुक जाते हैं,
संघर्षों का स्वागत करते, वे लोग सदा सुख पाते हैं।
सीता का हरण लक्ष्मण-मूर्च्छा से आगे जीना भी जरूरी है,
पुरुषोत्तम राम कहाने को आँसू पीना भी जरूरी है।
धर्मराज के अश्वमेध का, बीज पार्थ बोना होगा,
विजयश्री आमन्त्रण हेतु, अभिमन्यु खोना होगा।
यशकाय वही जीवित जग में, जो मरना कर स्वीकार गयी।
न हार हरा सकती हमको, दे हार स्वयं ही हार गयी।।2।।

चाणक्य शिखा खोलेगा जब, और मौर्य प्रमाद भगायेगा,
हारेगा दम्भ और सेल्यूकस, आकर दामाद बनायेगा।
कभी-कभी संघर्षों से, सच्चाई तक हारी देखी,
हार-हार कर जो जीती, वो गौरी की बारी देखी।
जितने चमके चेहरे दिखते, पीछे अनके भी व्यथायें हैं,
गाँधी-लिंकन, मंडेला सी, अगणित जिद की गाथायें हैं।
संघर्षी धारा बना बोस-आजाद, भगत सरदार गयी,
न हार हरा सकती हमको, दे हार स्वयं ही हार गयी।।3।।

हर असफलता कुछ सीख लिये, अपने कर्त्तव्य का बोध बने
आलस्य-अहं और हीन भाव के सम्मुख बन प्रतिशोध तने।
जो छूट गये हैं स्वप्न अधूरे, नींद नहीं फिर आने दें,
अद्यनिक से श्रम के स्वेद विन्दु फिर मार्ग छोड़ न जाने दें।
धरा स्वयं ही धूम-धाम सूरज छिपने का भान करे,
देख अडिगता चोटी की तिनका झुककर सम्मान करे,
नामुमकिन-मुश्किल शब्द थके, कर कर्मठता अधिकार गयी।
न हार हरा सकती हमको, दे हार स्वयं ही हार गयी।।4।।

विशेष १०वीं १२वीं की परीक्षाओं में परिणाम अनुकूल न आने पर अथवा कागजों में अंकित अंक अपेक्षाकृत कम प्राप्त होने पर निराश, हताश होकर जीवनघाती कदम उठाने वाले अबोध बालकों को विशेष प्रेरक उपरोक्त कविता

# विभिन्न आर्य समाजों के कार्यक्रमों से लिया गया छाया चित्र

आर्य समाज अलीपुर, मुजफ्फर नगर के वार्षिकोत्सव से लिया गया छाया–चित्र

आर्य समाज भरुआसुमेरपुर, हमीर पुर के कार्यक्रम से लिया गया छाया चित्र

पर्यावरण दिवस पर गुरूकुल राजघाट अलीगढ़ के कार्यक्रम से लिया गया छायाचित्र

आर्य समाज गंगोह सहारनपुर की पर्यावरण संगोष्ठी से लिया गया छाया चित्र

ओ३म्

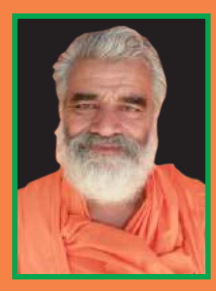



## महर्षि दयानन्द गुरूकुल पूठ महाविद्यालय गढ़मुक्तेश्वर, हापुड उ.प्र. में प्रवेश प्रारम्भ



गढ़मुक्तेश्वर गंगा किनारे प्राचीन तीर्थ गुरूद्रोणाचार्य की तपस्थली गुरूकुल पूठ में नवीन सत्र के प्रवेश प्रारम्भ हो रहे हैं। शान्त एकान्त वातावरण में न्यूनतम कक्षा ५ उत्तीर्ण छात्रों का प्रवेश होगा ६, ७ एवं ८ उत्तीर्ण भी प्रवेश होगें प्रवेश परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर ही मान्य होगा शीघ्रता करें उ०प्र० मा०सं०शि० परिषद् लखनऊ से मान्यता है शिक्षा आर्य वीर दल का प्रशिक्षण भी होता है। शिक्षा निःशुल्क है मात्र छात्रावास व्यय ही लिया जायेगा।

दिनेश, आचार्य
९४११०२९७७५

राजीव, प्राचार्य
९४१०९३८४४४

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
संचालक, मो. ९८३७४०२१९२

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक – मुद्रक –प्रकाशक –श्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती, भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस, 5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शारदा प्रिंटिंग प्रेस, माडल हाउस, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है– सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।